



साभार : नेहरू मेमोरियल फ्यूजियम एवं लाइब्रेरी

यह तसवीर अक्टूबर 1960 में न्यूयार्क में गुटनिरपेक्ष देशों की एक संगोष्ठी की है। इसमें जवाहरलाल नेहरू घाना के एनकूमा, मिस्र के नासिर, इंडोनेशिया के सुकर्णो और युगोस्लाविया के टीटो के साथ नज़र आ रहे हैं।

इस अध्याय में...

अब तक हमने इस किताब में देश में हुए बदलाव और घरेलू चुनौतियों पर अपनी नजर डाली है। इस अध्याय में हम बाहरी चुनौतियों के बारे में पढ़ेंगे। इस मोर्चे पर भी अपने देश के नेताओं ने नयी राह अपनायी और बाहरी चुनौतियों के मामले में गुटनिरपेक्षता की नीति का पालन किया। बहरहाल, हमारे नेताओं को पड़ोसी देशों से हुए युद्धों से भी निपटना पड़ा। भारत को अपने पड़ोसी देशों से 1962, 1965 और 1971 में युद्ध लड़ना पड़ा था। इन लड़ाइयों और हमारे विदेशी संबंधों को देश की राजनीति ने एक शकल प्रदान की। देश की राजनीति स्वयं भी इस क्रम में प्रभावित हुई।

इस अध्याय में हम अंदरूनी और बाहरी राजनीति के इसी रिश्ते के बारे में पढ़ेंगे। इस अध्याय में चर्चा की जाएगी कि:

- भारत के विदेश संबंधों ने किन अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में आकार ग्रहण किया;
- भारत की विदेश नीति किन सिद्धांतों से निर्देशित हुई;
- चीन और पाकिस्तान के साथ भारत के रिश्ते कैसे रहे; और
- भारत की परमाणु नीति का उद्भव किन स्थितियों में हुआ?

भारत के विदेश संबंध



12122CH04

अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ

भारत बड़ी विकट और चुनौतीपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में आजाद हुआ था। दुनिया महायुद्ध की तबाही से अभी बाहर निकली थी और उसके सामने पुनर्निर्माण का सवाल प्रमुख था। एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था बनाने के प्रयास हो रहे थे और उपनिवेशवाद की समाप्ति के फलस्वरूप दुनिया के नक्शे पर नए देश नमूदार हो रहे थे। नए देशों के सामने लोकतंत्र कायम करने और अपनी जनता की भलाई करने की दोहरी चुनौती थी। स्वतंत्रता के तुरंत बाद भारत ने जो विदेश नीति अपनाई उनमें हम इन सारे सरोकारों की झलक पाते हैं। वैश्विक स्तर के इन सरोकारों के अलावा भारत की कुछ अपनी चिंताएँ भी थीं। अंग्रेजी सरकार अपने पीछे अंतर्राष्ट्रीय विवादों की एक पूरी विरासत छोड़ गई थी; बँटवारे के कारण अलग से दवाब पैदा हुए थे और गरीबी मिटाने का काम सामने मुँह बाएँ खड़ा था। कुल जमा इन्हीं संदर्भों के बीच भारत ने एक स्वतंत्र राष्ट्र-राज्य के रूप में अंतर्राष्ट्रीय मामलों में भागीदारी शुरू की।

एक राष्ट्र के रूप में भारत का जन्म विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि में हुआ था। ऐसे में भारत ने अपनी विदेश नीति में अन्य सभी देशों की संप्रभुता का सम्मान करने और शांति कायम करके अपनी सुरक्षा सुनिश्चित करने का लक्ष्य सामने रखा। इस लक्ष्य की प्रतिध्वनि संविधान के नीति-निर्देशक सिद्धांतों में सुनाई देती है।

जिस तरह किसी व्यक्ति या परिवार के व्यवहारों को अंदरूनी और बाहरी कारक निर्देशित करते हैं उसी तरह एक देश की विदेश नीति पर भी घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय वातावरण का असर पड़ता है। विकासशील देशों के पास अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के भीतर अपने सरोकारों को पूरा करने के लिए जरूरी संसाधनों का अभाव होता है। इसके चलते वे बड़े-चढ़े देशों की अपेक्षा बड़े सीधे-सादे लक्ष्यों को लेकर अपनी विदेश नीति तय करते हैं। ऐसे देशों का जोर इस बात पर होता है कि उनके पड़ोस में अमन-चैन कायम रहे और विकास होता रहे। इसके अतिरिक्त, विकासशील देश आर्थिक और सुरक्षा की दृष्टि से ज्यादा ताकतवर देशों पर निर्भर होते हैं। इस निर्भरता का भी उनकी विदेश नीति पर जब-तब असर पड़ता है। दूसरे विश्वयुद्ध के तुरंत बाद के दौर में अनेक विकासशील देशों ने ताकतवर देशों की मर्जी को ध्यान में रखकर अपनी विदेश नीति अपनाई क्योंकि इन देशों से इन्हें अनुदान अथवा कर्ज मिल रहा था। इस वजह से दुनिया के विभिन्न देश दो खेमों में बँट गए। एक खेमा संयुक्त राज्य अमरीका और उसके समर्थक देशों के प्रभाव में रहा तो दूसरा खेमा सोवियत संघ के प्रभाव में। आपने इसके बारे में 'समकालीन विश्व राजनीति' नामक किताब में पढ़ा होगा। आपने इस किताब में गुटनिरपेक्ष-आंदोलन के बारे में भी पढ़ा होगा। आप इस किताब में पढ़ चुके हैं कि शीतयुद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का संदर्भ पूरी तरह बदल गया। बहरहाल, जब भारत आजाद हुआ था और अपनी विदेश नीति तैयार कर रहा था तब शीतयुद्ध शुरू ही हुआ था और दुनिया बड़ी तेजी से दो खेमों में बँटती जा रही थी।

आजादी किन चीजों से बनती है? आजादी बुनियादी तौर पर विदेश संबंधों से ही बनी होती है। यही आजादी की कसौटी भी है। बाकी सारा कुछ तो स्थानीय स्वायत्तता है। एक बार विदेश संबंध आपके हाथ से निकलकर दूसरे के हाथ में चले जाएँ तो फिर जिस हद तक आपके हाथ से ये संबंध छूटें और जिन मसलों में छूटें-वहाँ तक आप आजाद नहीं रहते।

जवाहरलाल नेहरू
संविधान सभा की एक बहस के दौरान (मार्च 1949)

संवैधानिक सिद्धांत

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51 में 'अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के बढ़ावे' के लिए राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांत के हवाले से कहा गया है कि राज्य :

- (क) अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि का,
- (ख) राष्ट्रों के बीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण संबंधों को बनाए रखने का,
- (ग) संगठित लोगों के एक-दूसरे से व्यवहारों में अंतर्राष्ट्रीय विधि और संधि-बाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का, और
- (घ) अंतर्राष्ट्रीय विवादों को माध्यस्थता द्वारा निपटारे के लिए प्रोत्साहन देने का, प्रयास करेगा।

क्या 1950 और 1960 के दशक की विश्व राजनीति में भारत इन दोनों में से किसी खेमे में शामिल था? क्या भारत अपनी विदेश नीति को शांतिपूर्ण ढंग से लागू करने और अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों से बचे रहने में सफल रहा?

गुटनिरपेक्षता की नीति

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन अपने आप में कोई स्वतंत्र घटना नहीं हैं। पूरी दुनिया में उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष चल रहे थे और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन भी इसी विश्वव्यापी संघर्ष का हिस्सा था। इस आंदोलन का असर एशिया और अफ्रीका के कई मुक्ति आंदोलनों पर हुआ। आजादी मिलने से पहले भी भारत के राष्ट्रवादी नेता दुनिया के अन्य उपनिवेशों में मुक्ति संग्राम चला रहे नेताओं के संपर्क में थे। ये सभी नेता आखिर उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के विरुद्ध एक साझी लड़ाई लड़ रहे थे। नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान 'इंडियन नेशनल आर्मी' (आई.एन.ए.) का गठन किया था। इससे साफ़-साफ़ जाहिर होता है कि स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भारत के संबंध विदेशों में रह रहे भारतीयों से बन चुके थे।



चौथे
अध्याय में एक बार फिर
से जवाहरलाल नेहरू! क्या वे
कोई सुपरमैन थे
या, उनकी भूमिका
महिमा-मंडित कर दी
गई है?

किसी राष्ट्र की विदेश नीति से उसके अंदरूनी और बाहरी सरोकारों की झलक मिलती है। भारत का स्वतंत्रता आंदोलन जिन उदात्त विचारों से प्रेरित था उनका असर भारत की विदेश नीति पर भी पड़ा। बहरहाल, भारत को जिस वक्त आजादी हासिल हुई उस समय शीतयुद्ध का दौर भी शुरू हो चुका था। आप 'समकालीन विश्व राजनीति' की किताब के पहले अध्याय में पढ़ चुके हैं कि शीतयुद्ध के दौर में दुनिया के देश दो खेमों में बँट रहे थे। एक खेमे का अगुआ संयुक्त राज्य अमरीका था और दूसरे का सोवियत संघ। दोनों खेमों के बीच विश्वस्तर पर आर्थिक, राजनीतिक और सैन्य टकराव जारी था। इसी दौर में संयुक्त राष्ट्र संघ भी अस्तित्व में आया; परमाणु हथियारों का निर्माण शुरू हुआ; चीन में कम्युनिस्ट शासन की स्थापना हुई। अनौपनिवेशीकरण की प्रक्रिया भी इसी दौर में आरंभ हुई थी। भारत के नेताओं को अपने राष्ट्रीय हित इसी संदर्भ के दायरे में साधने थे।

नेहरू की भूमिका

भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने राष्ट्रीय एजेंडा तय करने में निर्णायक भूमिका निभाई। वे प्रधानमंत्री के साथ-साथ विदेश मंत्री भी थे। प्रधानमंत्री और विदेश मंत्री के रूप में 1946 से 1964 तक उन्होंने भारत की विदेश नीति की रचना और क्रियान्वयन पर गहरा प्रभाव डाला। नेहरू की विदेश नीति के तीन बड़े उद्देश्य थे- कठिन संघर्ष से प्राप्त संप्रभुता को बचाए रखना, क्षेत्रीय अखंडता को बनाए रखना और तेज़ रफ्तार से आर्थिक विकास करना। नेहरू इन उद्देश्यों को गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाकर हासिल करना चाहते थे। उन दिनों देश में कुछ पार्टियाँ और समूह ऐसे भी थे जिनका मानना था कि भारत को अमरीकी खेमे के साथ ज्यादा नज़दीकी बढ़ानी चाहिए क्योंकि इस खेमे की प्रतिष्ठा लोकतंत्र के हिमायती के रूप में थी। इस धारा पर सोचने वालों में डा. भीमराव अंबेडकर भी शामिल थे। साम्यवाद की विरोधी कुछ राजनीतिक पार्टियाँ भी चाहती थीं कि भारत अपनी विदेश नीति अमरीका के पक्ष में बनाए। ऐसे दलों में भारतीय जनसंघ और स्वतंत्र पार्टी प्रमुख थे। लेकिन, विदेश नीति को तैयार करने के मामले में नेहरू को खासी बढ़त हासिल थी।

दो खेमों से दूरी

आज़ाद भारत की विदेश नीति में शांतिपूर्ण विश्व का सपना था और इसके लिए भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति का पालन किया। भारत ने इसके लिए शीतयुद्ध से उपजे तनाव को कम करने की कोशिश की और संयुक्त राष्ट्र संघ के शांति-अभियानों में अपनी सेना भेजी। आप पूछ सकते हैं कि शीतयुद्ध के दौरान भारत किसी खेमे में क्यों शामिल नहीं हुआ? भारत, अमरीका और सोवियत संघ की अगुवाई वाले सैन्य गठबंधनों से अपने को दूर रखना चाहता था। 'समकालीन विश्व राजनीति' की किताब में आप पढ़ चुके हैं कि शीतयुद्ध के समय अमरीका ने उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (NATO) और सोवियत संघ ने इसके जवाब में 'वारसा पैक्ट' नामक संधि संगठन बनाया था। भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति को आदर्श माना। संतुलन साधने की यह कठिन कोशिश थी और कभी-कभी संतुलन बहुत कुछ नहीं भी सध पाता था। 1956 में जब ब्रिटेन ने स्वेज नहर के मामले को लेकर मिस्र पर आक्रमण किया तो भारत ने इस नव-औपनिवेशिक हमले के विरुद्ध विश्वव्यापी विरोध की अगुवाई की। इसी साल सोवियत संघ ने हंगरी पर आक्रमण किया था लेकिन भारत ने सोवियत संघ के इस कदम की सार्वजनिक निंदा नहीं की। ऐसी स्थिति के बावजूद, कमोबेश भारत ने अंतर्राष्ट्रीय मामलों पर स्वतंत्र रवैया अपनाया। उसे दोनों खेमों के देशों ने सहायता और अनुदान दिए।

भारत अभी बाकी विकासशील देशों को गुटनिरपेक्षता की नीति के बारे में आश्वस्त करने में लगा था कि पाकिस्तान अमरीकी नेतृत्व वाले सैन्य-गठबंधन में शामिल हो गया। इस वजह से 1950 के दशक में भारत-अमरीकी संबंधों में खटास पैदा हो गई। अमरीका, सोवियत संघ से भारत की बढ़ती हुई दोस्ती को लेकर भी नाराज़ था।

आपने पिछले अध्याय में पढ़ा कि भारत ने नियोजित विकास की रणनीति अपनाई थी। इस नीति में जोर आयात को कम करने पर था। इसमें संसाधन-आधार तैयार करने पर जोर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप निर्यात के मामले में भी प्रगति बढ़ी सीमित थी। विकास की इस रणनीति के कारण बाहरी दुनिया से भारत का आर्थिक लेन-देन बड़ा सीमित था।

आमतौर पर हमारी नीति ताकत की राजनीति से अपने को अलग रखने और महाशक्तियों के एक खेमे के विरुद्ध दूसरे खेमे में शामिल न होने की है। आज दो अग्रणी खेमे रूस और अमरीका-ब्रिटेन के हैं। हमें दोनों के साथ दोस्ताना संबंध रखना है साथ ही उनके खेमे में शामिल भी नहीं होना है। रूस और अमरीका एक-दूसरे को लेकर बहुत शक्ति हैं और अन्य देशों पर भी शक करते हैं। इस कारण हमारा रास्ता कठिन है और दोनों हम पर शक कर सकते हैं कि हम उनके विरोधी खेमे की तरफ झुक रहे हैं। इससे बचा नहीं जा सकता।

जवाहरलाल नेहरू
के.पी.एस. मेनन को एक
पत्र में (जनवरी, 1947)



हम लोग आज की बनिस्बत जब ज्यादा गरीब, कमजोर और नए थे तो शायद दुनिया में हमारी पहचान कहीं ज्यादा थी। है ना विचित्र बात?

....ताकत के तीनों साधनों -
संपदा, धन और जन - से
हीन एक देश अब बड़ी तेजी
से सभ्य जगत में एक नैतिक
ताकत के रूप में पहचान
हासिल कर रहा है उसकी
आवाज़ को दिग्गज देशों की
जमात में बड़ी इज्जत के साथ
सुना जाता है...

सी राजगोपालाचारी
एडविना माउंटबेटन को एक
पत्र में, 1950

एफ्रो-एशियाई एकता

भारत के आकार, अवस्थिति और शक्ति-संभावना को भाँपकर नेहरू ने विश्व के मामलों, खासकर एशियाई मामलों में भारत के लिए बड़ी भूमिका निभाने का स्वप्न देखा था। नेहरू के दौर में भारत ने एशिया और अफ्रीका के नव-स्वतंत्र देशों के साथ संपर्क बनाए। 1940 और 1950 के दशकों में नेहरू बड़े मुखर स्वर में एशियाई एकता की पैरोकारी करते रहे। नेहरू की अगुवाई में भारत ने 1947 के मार्च में ही एशियाई संबंध सम्मेलन (एशियन रिलेशंस कांफ्रेंस) का आयोजन कर डाला था जबकि अभी भारत को आजादी मिलने में पाँच महीने शेष थे। भारत ने इंडोनेशिया की आजादी के लिए भरपूर प्रयास किए। भारत चाहता था कि इंडोनेशिया डच औपनिवेशिक शासन से यथासंभव शीघ्र मुक्त हो जाए। इसके लिए भारत ने 1949 में इंडोनेशिया के स्वतंत्रता-संग्राम के समर्थन में एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन किया। भारत अनौपनिवेशीकरण की प्रक्रिया का प्रबल समर्थक था और उसने पूरी दृढ़ता से नस्लवाद का, खासकर दक्षिण अफ्रीका में जारी रंगभेद का विरोध किया। इंडोनेशिया के एक शहर बांडुंग में एफ्रो-एशियाई सम्मेलन 1955 में हुआ। आमतौर पर हम इसे बांडुंग-सम्मेलन के नाम से जानते हैं। अफ्रीका और एशिया के नव-स्वतंत्र देशों के साथ भारत के बढ़ते संपर्क का यह चरम बिंदु था। बांडुंग-सम्मेलन में ही गुटनिरपेक्ष आंदोलन की नींव पड़ी। गुटनिरपेक्ष आंदोलन का पहला सम्मेलन 1961 के सितंबर में बेलग्रेड में हुआ। गुटनिरपेक्ष आंदोलन की स्थापना में नेहरू की महती भूमिका रही थी। (देखें, 'समकालीन विश्व राजनीति' अध्याय-1)

चीन के साथ शांति और संघर्ष

पाकिस्तान के साथ अपने संबंधों के विपरीत आजाद भारत ने चीन के साथ अपने रिश्तों की शुरुआत बड़े दोस्ताना ढंग से की। चीनी क्रांति 1949 में हुई थी। इस क्रांति के बाद भारत, चीन की कम्युनिस्ट सरकार को मान्यता देने वाले पहले देशों में एक था। पश्चिमी प्रभुत्व के चंगुल से निकलने वाले इस देश को लेकर नेहरू के हृदय में गहरे भाव थे और उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय फ़लक पर इस सरकार की मदद की। नेहरू के कुछ सहयोगियों-मसलन सरदार बल्लभ भाई पटेल को आशंका थी कि आगामी दिनों में चीन भारत पर चढ़ाई कर सकता है। लेकिन नेहरू सोच रहे थे कि भारत पर चीन के आक्रमण की संभावना दूर-दूर तक नहीं है। बहुत दिनों से भारत की चीन से लगती सीमा पर सेना के बजाय अर्द्ध-सैनिक बल रखवाली कर रहे थे।

शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के पाँच सिद्धांतों यानी पंचशील की घोषणा भारत के प्रधानमंत्री नेहरू और चीन के प्रमुख चाऊ एन लाई ने संयुक्त रूप से 29 अप्रैल 1954 में की। दोनों देशों के बीच मजबूत संबंध की दिशा में यह एक अगला कदम था। भारत और चीन के नेता एक-दूसरे के देश का दौरा करते थे और उनके स्वागत में बड़ी भीड़ जुटती थी।

चीन का आक्रमण, 1962

चीन के साथ भारत के इस दोस्ताना रिश्ते में दो कारणों से खटास आई। चीन ने 1950 में तिब्बत पर कब्ज़ा कर लिया। इससे भारत और चीन के बीच ऐतिहासिक रूप से जो एक मध्यवर्ती राज्य बना चला आ रहा था, वह खत्म हो गया। शुरू-शुरू में भारत सरकार ने



तिब्बत

यह मध्य एशिया का मशहूर पठार है। ऐतिहासिक रूप से तिब्बत भारत और चीन के बीच विवाद का एक बड़ा मसला रहा है। अतीत में समय-समय पर चीन ने तिब्बत पर अपना प्रशासनिक नियंत्रण जताया और कई दफा तिब्बत आजाद भी हुआ। 1950 में चीन ने तिब्बत पर नियंत्रण कर लिया। तिब्बत के ज्यादातर लोगों ने चीनी कब्जे का विरोध किया। 1954 में जब भारत और चीन के बीच पंचशील समझौते पर हस्ताक्षर हुए तो इसके प्रावधानों में एक बात यह भी शामिल थी कि दोनों देश एक-दूसरे की क्षेत्रीय संप्रभुता का सम्मान करेंगे। चीन ने इस प्रावधान का अर्थ लगाया कि भारत तिब्बत पर चीनी दावेदारी की बात को स्वीकार कर रहा है। 1956 में चीनी शासनाध्यक्ष चाऊ एन लाई भारत के आधिकारिक दौर पर आए तो साथ ही साथ तिब्बत के धार्मिक नेता दलाई लामा भी भारत पहुँचे। उन्होंने तिब्बत की बिगड़ती स्थिति की जानकारी नेहरू को दी। चीन आश्वासन दे चुका था कि तिब्बत को चीन के अन्य इलाकों से कहीं ज्यादा स्वायत्तता दी जाएगी। 1958 में चीनी आधिपत्य के विरुद्ध तिब्बत में सशस्त्र विद्रोह हुआ। इस विद्रोह को चीन की सेनाओं ने दबा दिया। स्थिति बिगड़ती देखकर तिब्बत के पारंपरिक नेता दलाई लामा ने सीमा पारकर भारत में प्रवेश किया और 1959 में भारत से शरण माँगी। भारत ने दलाई लामा को शरण दे दी। चीन ने भारत के इस कदम का कड़ा विरोध किया। पिछले 50 सालों में बड़ी संख्या में तिब्बती जनता ने भारत और दुनिया के अन्य देशों में शरण ली है। भारत में (खासकर दिल्ली में) तिब्बती शरणार्थियों की बड़ी-बड़ी बस्तियाँ हैं। हिमाचल प्रदेश के धर्मशाला में संभवतया तिब्बती शरणार्थियों की सबसे बड़ी बस्ती है। दलाई लामा ने भी भारत में धर्मशाला को ही अपना निवास-स्थान बनाया है। 1950 और 1960 के दशक में भारत के अनेक राजनीतिक दल और राजनेताओं ने तिब्बत की आजादी के प्रति अपना समर्थन जताया। इन दलों में सोशलिस्ट पार्टी और जनसंघ शामिल हैं।

चीन ने 'स्वायत्त तिब्बत क्षेत्र' बनाया है और इस इलाके को वह चीन का अभिन्न अंग मानता है। तिब्बती जनता चीन के इस दावे को नहीं मानती कि तिब्बत चीन का अभिन्न अंग है। ज्यादा से ज्यादा संख्या में चीनी बाशिंदों को तिब्बत लाकर वहाँ बसाने की चीन की नीति का तिब्बती जनता ने विरोध किया। तिब्बती चीन के इस दावे को भी नकारते हैं कि तिब्बत को स्वायत्तता दी गई है। वे मानते हैं कि तिब्बत की पारंपरिक संस्कृति और धर्म को नष्ट करके चीन वहाँ साम्यवाद फैलाना चाहता है।

नोट: यह नक्शा किसी माने के हिसाब से बनाया गया भारत का मानचित्र नहीं है। इसमें दिखाई गई भारत की अंतर्राष्ट्रीय सीमा रेखा को प्रामाणिक सीमा रेखा माना जाए।



MENON GOES

Dramatic announcement by Mr Nehru

Tremendous cheers acclaim news

By our Special Correspondent
New Delhi, Nov. 7.—Mr Krishna Menon is no longer a member of the Nehru Cabinet.
Prime Minister Nehru announced before a momentous meeting of the Congress Parliamentary Party this evening that he had decided to accept Mr Krishna Menon's resignation.
The statement was greeted with a resounding salvo of cheering by a record gathering of Congress MPs who had assembled in the high-domed Central Hall of Parliament for the usual party meeting on the eve of a new session. The cheering continued uninterruptedly for several minutes signifying the end of a new era with their leader's hand.
Ranadive, other Reds arrested



चीन के साथ 1960 में सीमा विवाद उठा। नेहरू और माओत्से तुंग के बीच बातचीत व्यर्थ साबित हुई।

2019-20

सच कहूँ तो उनको
(चारु एन लाई) लेकर
मेरे मन में बड़े अच्छे भाव
जगे... मेरा खयाल है कि चीन
के शासनाध्यक्ष अच्छे इन्सान
हैं और उन पर भरोसा किया
जा सकता है।

सी. राजगोपालाचारी
एक पत्र में, दिसंबर 1956

मैंने
सुना है कि
1962 के युद्ध के बाद
जब लता मंगेशकर ने 'ऐ
मेरे वतन के लोगों ... गाया तो
नेहरू भरी सभा में रो पड़े थे।
बड़ा अजीब लगता है यह सोचकर
कि इतने बड़े लोग भी किसी
भावुक लम्हे में रो
पड़ते हैं!



चीन के इस कदम का खुले तौर पर विरोध नहीं किया। बहरहाल, तिब्बत की संस्कृति को कुचलने की खबरें जैसे-जैसे सामने आने लगी, वैसे-वैसे भारत की बेचैनी भी बढ़ी। तिब्बत के धार्मिक नेता दलाई लामा ने भारत से राजनीतिक शरण माँगी और 1959 में भारत ने उन्हें शरण दे दी। चीन ने आरोप लगाया कि भारत सरकार अंदरूनी तौर पर चीन विरोधी गतिविधियों को हवा दे रही है।

इससे कुछ दिनों पहले भारत और चीन के बीच एक सीमा-विवाद भी उठ खड़ा हुआ था। भारत का दावा था कि चीन के साथ सीमा-रेखा का मामला अंग्रेजी-शासन के समय ही सुलझाया जा चुका है। लेकिन चीन की सरकार का कहना था कि अंग्रेजी शासन के समय का फ़ैसला नहीं माना जा सकता। मुख्य विवाद चीन से लगी लंबी सीमा-रेखा के पश्चिमी और पूर्वी छोर के बारे में था। चीन ने भारतीय भू-क्षेत्र में पड़ने वाले दो इलाकों-जम्मू-कश्मीर के लद्दाख वाले हिस्से के अक्साई-चीन और अरुणाचल प्रदेश-के अधिकांश हिस्सों पर अपना अधिकार जताया। अरुणाचल प्रदेश को उस समय नेफा या उत्तर-पूर्वी सीमांत कहा जाता था। 1957 से 1959 के बीच चीन ने अक्साई-चीन इलाके पर कब्ज़ा कर लिया और इस इलाके में उसने रणनीतिक बढ़त हासिल करने के लिए एक सड़क बनाई। दोनों देशों के शीर्ष नेताओं के बीच लंबी-लंबी चर्चाएँ और बातचीत चली लेकिन इसके बावजूद मतभेद को सुलझाया नहीं जा सका। दोनों देशों की सेनाओं के बीच सीमा पर कई बार झड़प हुई।

'समकालीन विश्व राजनीति' के पहले अध्याय में क्यूबा के मिसाइल-संकट की चर्चा की गई थी। क्या आपको इस घटना की याद है? जिस समय पूरे विश्व का ध्यान दो महाशक्तियों की तनातनी से पैदा इस संकट की तरफ लगा हुआ था, ठीक उसी समय चीन ने 1962 के अक्टूबर में दोनों विवादित क्षेत्रों पर बड़ी तेज़ी तथा व्यापक स्तर पर हमला किया। पहला हमला एक हफ्ते तक चला और इस दौरान चीनी सेना ने अरुणाचल प्रदेश के कुछ महत्वपूर्ण इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया। हमले का अगला दौर नवंबर महीने में शुरू हुआ। लद्दाख से लगे पश्चिमी मोर्चे पर भारतीय सेना ने चीन की बढ़त रोक दी लेकिन पूर्व में चीनी सेना आगे बढ़ते हुए असम के मैदानी हिस्से के प्रवेशद्वार तक पहुँच गई। आखिरकार, चीन ने एकतरफा युद्धविराम घोषित किया और चीन की सेनाएँ उस मुकाम पर लौट गई जहाँ वे हमले से पहले के वक्त में तैनात थीं।

चीन-युद्ध से भारत की छवि को देश और विदेश दोनों ही जगह धक्का लगा। इस संकट से उबरने के लिए भारत को अमरीका और ब्रिटेन दोनों से सैन्य मदद की गुहार लगानी पड़ी। सोवियत संघ इस संकट की घड़ी में तटस्थ बना रहा। चीन-युद्ध से भारतीय राष्ट्रीय स्वाभिमान को चोट पहुँची लेकिन इसके साथ-साथ राष्ट्र-भावना भी बलवती हुई। कुछ प्रमुख सैन्य-कमांडरों ने या तो इस्तीफा दे दिया या अवकाश ग्रहण कर लिया। नेहरू के नजदीकी सहयोगी और तत्कालीन रक्षामंत्री वी. के. कृष्णमेनन को भी मंत्रिमंडल छोड़ना पड़ा। नेहरू की छवि भी थोड़ी धूमिल हुई। चीन के इरादों को समय रहते न भाँप सकने और सैन्य तैयारी न कर पाने को लेकर नेहरू की बड़ी आलोचना हुई। पहली बार, उनकी सरकार के खिलाफ़ अविश्वास प्रस्ताव लाया गया और लोकसभा में इस पर बहस हुई। इसके तुरंत बाद, कांग्रेस ने कुछ महत्वपूर्ण उप-चुनावों में पटखनी खाई। देश का राजनीतिक मानस बदलने लगा था।

कुछ आगे की...

1962 के बाद भारत-चीन संबंध

सिने-संसार

भारत और चीन के बीच संबंधों को सामान्य होने में करीब दस साल लग गए। 1976 में दोनों देशों के बीच पूर्ण राजनयिक संबंध बहाल हो सके। शीर्ष नेता के तौर पर पहली बार अटल बिहारी वाजपेयी (वे तब विदेश मंत्री थे) 1979 में चीन के दौरे पर गए। बाद में, नेहरू के बाद राजीव गाँधी बतौर प्रधानमंत्री चीन के दौरे पर गए। इसके बाद से चीन के साथ भारत के संबंधों में ज्यादा जोर व्यापारिक मसलों पर रहा है। 'समकालीन विश्व राजनीति' की किताब में आप इन बातों को पढ़ चुके हैं।

भारत चीन संघर्ष का असर विपक्षी दलों पर भी हुआ। इस युद्ध और चीन-सोवियत संघ के बीच बढ़ते मतभेद से भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (भाकपा) के अंदर बड़ी उठा-पटक मची। सोवियत संघ का पक्षधर खेमा भाकपा में ही रहा और उसने कांग्रेस के साथ नजदीकी बढ़ायी। दूसरा खेमा कुछ समय के लिए चीन का पक्षधर रहा और यह खेमा कांग्रेस के साथ किसी भी तरह की नजदीकी के खिलाफ था। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी 1964 में टूट गई। इस पार्टी के भीतर जो खेमा चीन का पक्षधर था उसने मार्क्सवादी भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (सी.पी.आई.एम.-माकपा) बनाई। चीन-युद्ध के क्रम में माकपा के कई नेताओं को चीन का पक्ष लेने के आरोप में गिरफ्तार किया गया।

चीन के साथ हुए युद्ध ने भारत के नेताओं को पूर्वोत्तर की डावाँडोल स्थिति के प्रति सचेत किया। यह इलाका अत्यंत पिछड़ी दशा में था और अलग-थलग पड़ गया था। राष्ट्रीय एकता और अखंडता के लिहाज से भी यह इलाका चुनौतीपूर्ण था। चीन-युद्ध के तुरंत बाद इस इलाके को नयी तरतीब में ढालने की कोशिशें शुरू की गईं। नगालैंड को प्रांत का दर्जा दिया गया। मणिपुर और त्रिपुरा हालाँकि केंद्र-शासित प्रदेश थे लेकिन उन्हें अपनी विधानसभा के निर्वाचन का अधिकार मिला।

हकीकत



इस फिल्म की पृष्ठभूमि में 1962 के चीनी आक्रमण को दर्शाया गया है। भारतीय सेना की एक छोटी-सी टुकड़ी लद्दाख क्षेत्र में घिर गई है। सेना का कप्तान बहादुर सिंह स्थानीय घुमंतू कबीले की एक लड़की कम्मो की मदद से इस टुकड़ी को बाहर निकालने की कोशिश करता है। इस कोशिश में बहादुर सिंह और कम्मो दोनों शहीद हो जाते हैं। भारतीय टुकड़ी के जवान पूरे प्राणपण से चीनी हमलावरों से मुकाबला करते

हैं परंतु अंततः उन्हें अपनी जान न्यौछावर करनी पड़ती है।

यह फिल्म सेना के जवान के सामने आने वाली चुनौतियों, दिक्कतों के साथ-साथ चीनी विश्वासघात से उपजी राजनीतिक निराशा का भी मुआयना कराती है। इस फिल्म में युद्ध के दृश्यों को रचने के लिए डाक्युमेंटरी फुटेज का काफी इस्तेमाल किया गया है। हकीकत युद्ध आधारित फिल्मों की विधा में अहम स्थान रखती है।

वर्ष : 1964

निर्देशक : चेतन आनंद

अभिनय : धर्मेन्द्र, प्रिया राजवंश, बलराज साहनी, जयंत, सुधीर, संजय खान, विजय आनंद

पाकिस्तान के साथ युद्ध और शांति

कश्मीर मसले को लेकर पाकिस्तान के साथ बँटवारे के तुरंत बाद ही संघर्ष छिड़ गया था। आप इस विवाद के बारे में आठवें अध्याय में विस्तार से पढ़ सकते हैं। 1947 में ही कश्मीर में भारत और पाकिस्तान की सेनाओं के बीच एक छाया-युद्ध छिड़ गया था। बहरहाल, यह संघर्ष पूर्णव्यापी युद्ध का रूप न ले सका। यह मसला फिर संयुक्त राष्ट्र संघ के हवाले कर दिया गया। संयुक्त राज्य अमरीका और चीन के साथ भारत के संबंधों के लिहाज से पाकिस्तान एक महत्वपूर्ण घटक रहा।

कश्मीर के सवाल पर हुए संघर्ष के बावजूद भारत और पाकिस्तान की सरकारों के बीच सहयोग-संबंध कायम हुए। दोनों सरकारों ने मिल-जुल कर प्रयास किया कि बँटवारे के समय जो महिलाएँ अपहृत हुई थीं उन्हें अपने परिवार के पास वापस लौटाया जा सके। विश्व बैंक की मध्यस्थता से नदी जल में हिस्सेदारी को लेकर चला आ रहा एक लंबा विवाद सुलझा लिया गया। नेहरू और जनरल अयूब खान ने सिंधु नदी जल संधि पर 1960 में हस्ताक्षर किए। भारत-पाक संबंधों में नरमी-गरमी के बावजूद इस संधि पर ठीक-ठाक अमल होता रहा।

दोनों देशों के बीच 1965 में कहीं ज्यादा गंभीर किस्म के सैन्य-संघर्ष की शुरुआत हुई। आप अगले अध्याय में पढ़ेंगे कि इस वक्त लालबहादुर शास्त्री भारत के प्रधानमंत्री थे। 1965 के अप्रैल में पाकिस्तान ने गुजरात के कच्छ इलाके के रन में सैनिक हमला बोला। इसके बाद जम्मू-कश्मीर में उसने अगस्त-सितंबर के महीने में बड़े पैमाने पर हमला किया। पाकिस्तान के नेताओं को उम्मीद थी कि जम्मू-कश्मीर की जनता उनका समर्थन करेगी लेकिन ऐसा नहीं हुआ। कश्मीर के मोर्चे पर पाकिस्तानी सेना की बढ़त को रोकने के लिए प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री ने पंजाब की सीमा की तरफ से जवाबी हमला करने के आदेश दिए। दोनों देशों की सेनाओं के बीच घनघोर लड़ाई हुई और भारत की सेना आगे बढ़ते हुए लाहौर के नजदीक तक पहुँच गई।

संयुक्त राष्ट्र संघ के हस्तक्षेप से इस लड़ाई का अंत हुआ। बाद में, भारतीय प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री और पाकिस्तान के जनरल अयूब खान के बीच 1966 में ताशकंद-समझौता हुआ। सोवियत संघ ने इसमें मध्यस्थ की भूमिका निभाई। हालाँकि 1965 की लड़ाई में भारत ने पाकिस्तान को बहुत ज्यादा सैन्य क्षति पहुँचाई लेकिन इस युद्ध से भारत की कठिन आर्थिक स्थिति पर और ज्यादा बोझ पड़ा।

बांग्लादेश युद्ध, 1971

1970 में पाकिस्तान के सामने एक गहरा अंदरूनी संकट आ खड़ा हुआ। पाकिस्तान के पहले आम चुनाव में खंडित जनादेश आया। जुल्फिकार अली भुट्टो की पार्टी पश्चिमी पाकिस्तान में विजयी रही जबकि मुजीबुर्रहमान की पार्टी अवामी लीग ने पूर्वी पाकिस्तान में जोरदार कामयाबी हासिल की। पश्चिमी पाकिस्तान के नेताओं के हाथों अपने साथ हुए दोयम दर्जे के नागरिक के बरताव के विरोध में पूर्वी पाकिस्तान की बंगाली जनता ने इस पार्टी को वोट दिया था। पाकिस्तान के शासक इस जनादेश को स्वीकार नहीं कर पा रहे थे। आवामी लीग एक परिसंघ बनाने की माँग कर रही थी लेकिन वे इस माँग को भी स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे।

हम
ऐसा क्यों
कहते हैं कि भारत
और पाकिस्तान के बीच
युद्ध हुआ? नेता झगड़े और
सेनाओं के बीच युद्ध हुआ।
ज्यादातर आम नागरिकों
को इनसे कुछ
लेना-देना न
था।



Healthy babies
Prescribed by Doctors
for over 20 years
SOLD EVERYWHERE

The Times of India

NO. 246. VOL. CXXVII. * BOMBAY: TUESDAY, SEPTEMBER 7, 1965
Largest Net Sales among all Daily Newspapers in India.

REGD. No. 8 111

75



OUR TROOPS ON OUTSKIRTS OF LAHORE IAF Planes Blast Military Installations PAK FORCES ON THE RUN IN CHHAMB AREA

Jaurian In Flames: Success In Uri Sector Too

"The Times of India" News Service

BLACK-OUT IS ORDERED IN GREATER BOMBAY

By A Staff Reporter
BLACK-OUT has been ordered in Greater Bombay with immediate effect by the Commissioner of Police under the Defence of India Rules. The black-out will be during the hours between half an hour after sunset and half an hour before sunrise, according to the commissioner's order. All public lighting and street lights should be reduced to a minimum compatible with public safety. No light for decorative illumination or advertisement or any other purpose should be shown. No light below the centre of the bulb or by using a standard the specifications of the specifications of the police. The order was issued in the city.

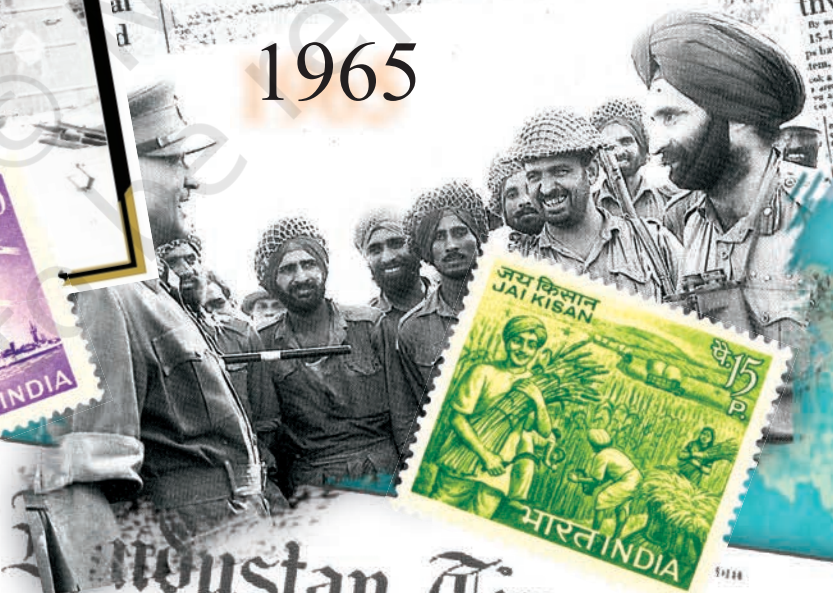
Indo-Pak Flights Cancelled

The Hindustan Times

WALKOT-PASRUR RAILWAY TAKEN IAF pounds Sargodha, Chak Jhumra airports

withdrawing in
thwal sector

1965



CONTACT LENS
DISCARDS YOUR SPECTS
K. K. GUPTA (Optician)
UBEROI OPTICIANS

The Hindustan Times

TROOPS MARCH INTO PAKISTAN

TRAYLOR MOHAR
SHIRTS & SUE
SHIRTS
WONDERFULLY
DRYCLEANED
AT
PAULSONS
88 G. Commercial Street
New Delhi
Phone 4182

इस बात से तो ऐसा जान पड़ता है कि भारत, सोवियत खेमे में शामिल हो गया था। क्या सोवियत संघ के साथ इस 20-वर्षीय संधि पर हस्ताक्षर करने के बावजूद हम कह सकते हैं कि भारत गुटनिरपेक्षता की नीति पर अमल कर रहा था?



Refugee influx threatens peace, India warns Pak



इसकी जगह पाकिस्तानी सेना ने 1971 में शेख मुजीब को गिरफ्तार कर लिया और पूर्वी पाकिस्तान के लोगों पर जुल्म ढाने शुरू किए। जवाब में पूर्वी पाकिस्तान की जनता ने अपने इलाके यानी मौजूदा बांग्लादेश को पाकिस्तान से मुक्त कराने के लिए संघर्ष छेड़ दिया। 1971 में पूरे साल भारत को 80 लाख शरणार्थियों का बोझ वहन करना पड़ा। ये शरणार्थी पूर्वी पाकिस्तान से भागकर भारत के नजदीकी इलाकों में शरण लिए हुए थे। भारत ने बांग्लादेश के 'मुक्ति संग्राम' को नैतिक समर्थन और भौतिक सहायता दी। पाकिस्तान ने आरोप लगाया कि भारत उसे तोड़ने की साजिश कर रहा है।

पाकिस्तान को अमरीका और चीन ने मदद की। 1960 के दशक में अमरीका और चीन के बीच संबंधों को सामान्य करने की कोशिश चल रही थी और इससे एशिया में सत्ता-समीकरण नया रूप ले रहा था। अमरीकी राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन के सलाहकार हेनरी किसिंजर ने 1971 के जुलाई में पाकिस्तान होते हुए गुपचुप चीन का दौरा किया। अमरीका-पाकिस्तान-चीन की धुरी बनती देख भारत ने इसके जवाब में सोवियत संघ के साथ 1971 में शांति और मित्रता की एक 20-वर्षीय संधि पर दस्तखत किए। संधि से भारत को इस बात का आश्वासन मिला कि हमला होने की सूरत में सोवियत संघ भारत की मदद करेगा।

महीनों राजनयिक तनाव और सैन्य तैनाती के बाद 1971 के दिसंबर में भारत और पाकिस्तान के बीच एक पूर्णव्यापी युद्ध छिड़ गया। पाकिस्तान के लड़ाकू विमानों ने पंजाब और राजस्थान पर हमले किए जबकि उसकी सेना ने जम्मू-कश्मीर में अपना मोर्चा खोला। जवाब में भारत ने अपनी वायुसेना, नौसेना और थलसेना के बूते पश्चिमी और पूर्वी मोर्चे से कार्रवाई की। स्थानीय लोगों के समर्थन और स्वागत के बीच भारतीय सेना पूर्वी पाकिस्तान में तेजी से आगे बढ़ी। दस दिनों के अंदर भारतीय सेना ने ढाका को तीन तरफ से घेर लिया और अपने 90,000 सैनिकों के साथ पाकिस्तानी सेना को आत्म-समर्पण करना पड़ा। बांग्लादेश के रूप में एक स्वतंत्र राष्ट्र के उदय के साथ भारतीय सेना ने अपनी तरफ से एकतरफा युद्ध-विराम घोषित कर दिया। बाद में, 3 जुलाई 1972 को इंदिरा गाँधी और जुल्फिकार अली भुट्टो के बीच शिमला-समझौते पर दस्तखत हुए और इससे अमन की बहाली हुई।

कुछ आगे की...

करगिल संघर्ष

1999 के शुरुआती महीनों में भारतीय इलाके की नियंत्रण सीमा रेखा के कई ठिकानों जैसे द्रास, माशकोह, काकसर और बतालिक पर अपने को मुजाहिदीन बताने वालों ने कब्जा कर लिया था। पाकिस्तानी सेना की इसमें मिलीभगत भाँप कर भारतीय सेना इस कब्जे के खिलाफ हरकत में आयी। इससे दोनों देशों के बीच संघर्ष छिड़ गया। इसे 'करगिल की लड़ाई' के नाम से जाना जाता है। 1999 के मई-जून में यह लड़ाई जारी रही। 26 जुलाई 1999 तक भारत अपने अधिकतर ठिकानों पर पुनः अधिकार कर चुका था। करगिल की लड़ाई ने पूरे विश्व का ध्यान खींचा था क्योंकि इससे ठीक एक साल पहले दोनों देश परमाणु हथियार बनाने की अपनी क्षमता का प्रदर्शन कर चुके थे। बहरहाल, यह लड़ाई सिर्फ करगिल के इलाके तक ही सीमित रही। पाकिस्तान में, इस लड़ाई को लेकर बहुत विवाद मचा। कहा गया कि सेना के प्रमुख ने प्रधानमंत्री को इस मामले में अँधेरे में रखा था। इस लड़ाई के तुरंत बाद पाकिस्तान की हुकूमत पर जनरल परवेज मुशर्रफ की अगुवाई में पाकिस्तानी सेना ने नियंत्रण कर लिया।

SEAMLESS
STEEL
TUBES
BOILER TUBES
To any Specification,
Size and Thickness.
GOVARDHAN DAS P. A.
104 MAGDOVI ST. BOMBAY 2.
TEL: 335412 - 334801

REGD. NO. MH 8
Published from Bombay, Delhi and Ahmedabad



THE TIMES OF INDIA

25 PAISE
PLUS 2 PAISE
EXCISE DUTY

BOMBAY: SATURDAY, DECEMBER 18, 1971

NO. 348 VOL. CXXIII

77



YAHYA YIELDS TO INDIRA, ENDS WAR

Somersault by General as
hails Delhi
keeps out

1971



Gen. A. A. K. Niazi signing the surrender documents in Dacca on Thursday. Lt.-Gen. A. K. N. Singh from left are Vice Admiral Krishnan, Air Marshall H. C. Dewan, Lt.-Gen. Sagar

Remain alert, warr



DELITE
WORKS
STEEL & WOODEN FURNITURE

Regd No D144

New Delhi Tuesday March 16 1971

Twenty Paise

MUJIB TAKES OVER 'BANGLA DESH'

Regd No D144

New Delhi Sunday March 28 1971

Twenty Paise

PAK PLANES BOMB BANGLA DESH

Baluchistan,
NWFP are
also free?

Freedom fighters
blow up bridges



Cong(N)
majority
in UP now
From Kapil Varan

INSTRUMENT OF SURRENDER SIGNED AT DACC A 16/163 HOURS (IST)

APPENDIX 2
ON 16 DEC 1971

The PAKISTAN Eastern Command agree to surrender all PAKISTAN Armed Forces in BANGLA DESH to Lieutenant-General JAGJIT SINGH AURORA, General Officer Commanding in Chief of the Indian and BANGLA DESH forces in the Eastern Theatre. This surrender includes all PAKISTAN land, air and naval forces as also all para-military forces and civil armed forces. The forces will lay down their arms and surrender at the places where they are currently located to the nearest regular troops under the command of Lieutenant-General JAGJIT SINGH AURORA.

The PAKISTAN Eastern Command shall come under the orders of Lieutenant-General JAGJIT SINGH AURORA as soon as this instrument has been signed. Disobedience of orders will be regarded as a breach of the surrender terms and will be dealt with in accordance with the accepted laws and usages of war. The decision of Lieutenant-General JAGJIT SINGH AURORA will be final, should any doubt arise as to the meaning or interpretation of the surrender terms.

Lieutenant-General JAGJIT SINGH AURORA gives a solemn assurance that personnel who surrender shall be treated with dignity and respect and that soldiers are entitled to in accordance with the provisions of the GENEVA Convention and guarantees the safety and well-being of all PAKISTAN military and para-military forces who surrender. Protection will be provided to foreign nationals, ethnic minorities and personnel of WEST PAKISTAN origin by the forces under the command of Lieutenant-General JAGJIT SINGH AURORA.

Jagjit Singh
JAGJIT SINGH AURORA
Lieutenant-General
General Officer Commanding in Chief
BANGLA DESH forces in the Eastern Theatre
16 December 1971.

AAK Niazi 'dt Gen.
(AMIR ABDULLAH KHAN NIAZI)
Lieutenant-General
Chief Martial Law Administrator Zone B and
Commander Eastern Command (PAKISTAN)
16 December 1971.

The surrender document



Of course China is on a side-even yesterday in bitter attack on India stated they would continue

for latest
WEDDING SAREES
ARTA SAMAJ ROAD,
Karl Bagh, N Delhi

युद्ध में इस निर्णायक जीत से देश में उत्साह की लहर दौड़ गई थी। अधिकांश भारतीयों ने इसे गौरव की घड़ी के रूप में देखा और माना कि भारत का सैन्य-पराक्रम प्रबल हुआ है। आप अगले अध्याय में पढ़ेंगे कि इंदिरा गाँधी इस वक्त भारत की प्रधानमंत्री थीं। 1971 के लोकसभा चुनावों में उन्हें विजय मिली थी। 1971 की जंग के बाद इंदिरा गाँधी की लोकप्रियता को चार चाँद लग गए। इस युद्ध के बाद अधिकतर राज्यों में विधानसभा के चुनाव हुए और अनेक राज्यों में कांग्रेस पार्टी बड़े बहुमत से जीती।

भारत ने अपने सीमित संसाधनों के साथ नियोजित विकास की शुरुआत की थी। पड़ोसी देशों के साथ संघर्ष के कारण पंचवर्षीय योजना पटरी से उतर गई। 1962 के बाद भारत को अपने सीमित संसाधन खासतौर से रक्षा क्षेत्र में लगाने पड़े। भारत को अपने सैन्य ढाँचे का आधुनिकीकरण करना पड़ा। 1962 में रक्षा-उत्पाद विभाग और 1965 में रक्षा आपूर्ति विभाग की स्थापना हुई। तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961-66) पर असर पड़ा और इसके बाद लगातार तीन एक-वर्षीय योजना पर अमल हुआ। चौथी पंचवर्षीय योजना 1969 में ही शुरू हो सकी। युद्ध के बाद भारत का रक्षा-व्यय बहुत ज्यादा बढ़ गया।

भारत की परमाणु नीति

इस दौर की एक खास बात थी भारत का परमाणु विस्फोट। भारत ने 1974 के मई में परमाणु परीक्षण किया। तेज़ गति से आधुनिक भारत के निर्माण के लिए नेहरू ने हमेशा विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर अपना विश्वास जताया था। नेहरू की औद्योगीकरण की नीति का एक महत्वपूर्ण घटक परमाणु कार्यक्रम था। इसकी शुरुआत 1940 के दशक के अंतिम सालों में होमी जहाँगीर भाभा के निर्देशन में हो चुकी थी। भारत शांतिपूर्ण उद्देश्यों में इस्तेमाल के लिए अणु ऊर्जा बनाना चाहता था। नेहरू परमाणु हथियारों के खिलाफ़ थे। उन्होंने महाशक्तियों पर व्यापक परमाणु निशस्त्रीकरण के लिए जोर दिया। बहरहाल, परमाणु आयुधों में बढ़ोत्तरी होती रही। साम्यवादी शासन वाले चीन ने 1964 के अक्टूबर में परमाणु परीक्षण किया। अणुशक्ति-संपन्न बिरादरी यानी संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत संघ, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन ने, जो संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् के स्थायी सदस्य भी थे, दुनिया के अन्य देशों पर 1968 की परमाणु अप्रसार संधि को थोपना चाहा। भारत हमेशा से इस संधि को भेदभावपूर्ण मानता आया था। भारत ने इस पर दस्तखत करने से इनकार कर दिया था। भारत ने जब अपना पहला परमाणु परीक्षण किया तो इसे उसने शांतिपूर्ण परीक्षण करार दिया। भारत का कहना था कि वह अणुशक्ति को सिर्फ़ शांतिपूर्ण उद्देश्यों में इस्तेमाल करने की अपनी नीति के प्रति दृढ़ संकल्प है।

बड़ा
घनचक्कर है!
क्या यहाँ सारा मामला
परमाणु बम बनाने का
नहीं है? हम ऐसा
सीधे-सीधे क्यों नहीं
कहते।



जिस वक्त परमाणु परीक्षण किया गया था वह दौर घरेलू राजनीति के लिहाज से बड़ा कठिन था। 1973 में अरब-इजरायल युद्ध हुआ था। इसके बाद पूरे विश्व में तेल के लिए हाहाकार मचा हुआ था। अरब राष्ट्रों ने तेल के दामों में भारी वृद्धि कर दी थी। भारत इस वजह से आर्थिक समस्याओं से घिर गया। भारत में मुद्रास्फीति बहुत ज्यादा बढ़ गई। जैसा कि आप छठे अध्याय में पढ़ेंगे, इस वक्त देश में कई आंदोलन चल रहे थे और इसी समय देशव्यापी रेल-हड़ताल भी हुई थी।

हालाँकि राजनीतिक दलों के बीच विदेश नीति के बारे में छोटे-मोटे मतभेद जरूर हैं लेकिन भारतीय राजनीति में विभिन्न दलों के बीच राष्ट्रीय अखंडता, अंतर्राष्ट्रीय सीमा रेखा की सुरक्षा तथा राष्ट्रीय हित के मसलों पर व्यापक सहमति है। इस कारण, हम देखते हैं कि 1962-1971 के बीच जब भारत ने तीन युद्धों का सामना किया और इसके बाद के समय में भी जब समय-समय पर कई पार्टियों ने सरकार बनाई - विदेश नीति की भूमिका पार्टी की राजनीति में बड़ी सीमित रही।

कुछ आगे की... भारत का परमाणु-कार्यक्रम



भारत ने परमाणु अप्रसार के लक्ष्य को ध्यान में रखकर की गई संधियों का विरोध किया क्योंकि ये संधियाँ उन्हीं देशों पर लागू होने को थीं जो परमाणु शक्ति से हीन थे। इन संधियों के द्वारा परमाणु हथियारों से लैस देशों की जमात के परमाणु शक्ति पर एकाधिकार को वैधता दी जा रही थी। इसी कारण, 1995 में जब परमाणु-अप्रसार संधि को अनियतकाल के लिए बढ़ा दिया गया तो भारत ने इसका विरोध किया और उसने व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि (कंप्रेंहेंसिव टेस्ट बैन ट्रीटी-सीटीबीटी) पर भी हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया।

भारत ने 1998 के मई में परमाणु परीक्षण किए और यह जताया कि उसके पास सैन्य उद्देश्यों के लिए अणुशक्ति को इस्तेमाल में लाने की क्षमता है। इसके तुरंत बाद पाकिस्तान ने भी परमाणु परीक्षण किए। इससे क्षेत्र में परमाणु युद्ध की आशंका को बल मिला। अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी भारतीय उपमहाद्वीप में हुए इस परमाणु परीक्षण को लेकर बहुत नाराज थी और उसने भारत तथा पाकिस्तान, दोनों पर कुछ प्रतिबंध लगाए जिन्हें बाद में हटा लिया गया। भारत की परमाणु नीति में सैद्धांतिक तौर पर यह बात स्वीकार की गई है कि भारत अपनी रक्षा के लिए परमाणु हथियार रखेगा लेकिन इन हथियारों का 'प्रयोग पहले नहीं' करेगा। भारत की परमाणु नीति में यह बात दुहराई गई है कि भारत वैश्विक स्तर पर लागू और भेदभाव हीन परमाणु निशस्त्रीकरण के प्रति वचनबद्ध है ताकि परमाणु हथियारों से मुक्त विश्व की रचना हो।

विश्व राजनीति के बदलते समीकरण

जैसा कि आप इस किताब के छोटे और नौवें अध्याय में पढ़ेंगे, 1977 के बाद के दौर में कई गैर-कांग्रेसी सरकारें बनीं। इस दौर में विश्व राजनीति में भी नाटकीय बदलाव आ रहे थे। इनका भारत के विदेशी संबंधों पर क्या असर पड़ा?

1977 में जनता पार्टी की सरकार बनी थी। इस सरकार ने घोषणा की कि सच्ची गुटनिरपेक्ष नीति का पालन किया जाएगा। इसका आशय यह था कि विदेश नीति में सोवियत संघ के प्रति आए झुकाव को खत्म किया जाएगा। इसके बाद की सभी सरकारों ने (कांग्रेसी या गैर-कांग्रेसी) चीन के साथ बेहतर संबंध बनाने और अमरीका के साथ नजदीकी रिश्ते बनाने की पहल की। भारतीय राजनीति में और आमतौर पर चलने वाली बहसों में भी भारत की विदेश नीति को विशेष तौर पर दो संदर्भों में देखा जाता है - एक तो पाकिस्तान को लेकर भारत के रुख के संदर्भ में और दूसरे भारत-अमरीका संबंधों के संदर्भ में। 1990 के बाद के दौर में अमरीका-समर्थक विदेश नीति अपनाने के लिए शासक दलों की आलोचना हुई है।

विदेश नीति हमेशा राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखकर बनाई जाती है। रूस लगातार भारत का एक महत्वपूर्ण मित्र बना हुआ है लेकिन 1990 के बाद से रूस का अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व कम हुआ है। इसी कारण भारत की विदेश नीति में अमरीका समर्थक रणनीतियाँ अपनाई गई हैं। इसके अतिरिक्त, मौजूदा अंतर्राष्ट्रीय परिवेश में सैन्य-हितों के बजाय आर्थिक-हितों का जोर ज्यादा है। इसका भी असर भारत की विदेश नीति में अपनाए गए विकल्पों पर पड़ा है। इसके साथ ही साथ, इस अवधि में भारत-पाक संबंधों में भी कई नयी बातें जुड़ीं। कश्मीर दोनों देशों के बीच मुख्य मसले के तौर पर कायम है लेकिन संबंधों को सामान्य बनाने के लिए दोनों देशों ने कई प्रयास किए हैं। सांस्कृतिक आदान-प्रदान, नागरिकों की एक-दूसरे के देश में आवाजाही और पारस्परिक आर्थिक सहयोग को दोनों देशों ने बढ़ावा दिया। क्या आप जानते हैं कि भारत और पाकिस्तान के बीच रेल और बस सेवा की शुरुआत की गई है? यह हाल के समय की सबसे बड़ी उपलब्धि है। बहरहाल, इन सारे प्रयासों के बावजूद 1999 में भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध की स्थिति पैदा हो गई थी। ऐसे माहौल में शांति प्रयासों को धक्का लगा लेकिन स्थायी तौर पर अमन कायम करने के लिए प्रयास जारी हैं।

प्रश्नावली

1. इन बयानों के आगे सही या गलत का निशान लगाएँ:

- | | |
|-----|--|
| (क) | गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाने के कारण भारत, सोवियत संघ और संयुक्त राज्य अमरीका, दोनों की सहायता हासिल कर सका। |
| (ख) | अपने पड़ोसी देशों के साथ भारत के संबंध शुरुआत से ही तनावपूर्ण रहे। |
| (ग) | शीतयुद्ध का असर भारत-पाक संबंधों पर भी पड़ा। |
| (घ) | 1971 की शांति और मैत्री की संधि संयुक्त राज्य अमरीका से भारत की निकटता का परिणाम थी। |

2. निम्नलिखित का सही जोड़ा मिलाएँ:

- | | | | |
|-----|---|-------|--|
| (क) | 1950-64 के दौरान भारत की विदेश नीति का लक्ष्य | (i) | तिब्बत के धार्मिक नेता जो सीमा पार करके भारत चले आए। |
| (ख) | पंचशील | (ii) | क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता की रक्षा तथा आर्थिक विकास। |
| (ग) | बांडुंग सम्मेलन | (iii) | शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के पाँच सिद्धांत। |
| (घ) | दलाई लामा | (iv) | इसकी परिणति गुटनिरपेक्ष आंदोलन में हुई। |

3. नेहरू विदेश नीति के संचालन को स्वतंत्रता का एक अनिवार्य संकेतक क्यों मानते थे? अपने उत्तर में दो कारण बताएँ और उनके पक्ष में उदाहरण भी दें।

4. “विदेश नीति का निर्धारण घरेलू ज़रूरत और अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के दोहरे दबाव में होता है।” 1960 के दशक में भारत द्वारा अपनाई गई विदेश नीति से एक उदाहरण देते हुए अपने उत्तर की पुष्टि करें।

5. अगर आपको भारत की विदेश नीति के बारे में फैसला लेने को कहा जाए तो आप इसकी किन दो बातों को बदलना चाहेंगे। ठीक इसी तरह यह भी बताएँ कि भारत की विदेश नीति के किन दो पहलुओं को आप बरकरार रखना चाहेंगे। अपने उत्तर के समर्थन में तर्क दीजिए।

6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए:

- | | |
|-----|------------------------------------|
| (क) | भारत की परमाणु नीति |
| (ख) | विदेश नीति के मामलों पर सर्व-सहमति |

7. भारत की विदेश नीति का निर्माण शांति और सहयोग के सिद्धांतों को आधार मानकर हुआ। लेकिन, 1962-1971 की अवधि यानी महज दस सालों में भारत को तीन युद्धों का सामना करना पड़ा। क्या आपको लगता है कि यह भारत की विदेश नीति की असफलता है अथवा, आप इसे अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का परिणाम मानेंगे? अपने मतव्य के पक्ष में तर्क दीजिए।

8. क्या भारत की विदेश नीति से यह झलकता है कि भारत क्षेत्रीय स्तर की महाशक्ति बनना चाहता है? 1971 के बांग्लादेश युद्ध के संदर्भ में इस प्रश्न पर विचार करें।

9. किसी राष्ट्र का राजनीतिक नेतृत्व किस तरह उस राष्ट्र की विदेश नीति पर असर डालता है? भारत की विदेश नीति के उदाहरण देते हुए इस प्रश्न पर विचार कीजिए।

10. निम्नलिखित अवतरण को पढ़ें और इसके आधार पर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

गुटनिरपेक्षता का व्यापक अर्थ है अपने को किसी भी सैन्य गुट में शामिल नहीं करना... इसका अर्थ होता है चीजों को यथासंभव सैन्य दृष्टिकोण से न देखना और इसकी कभी जरूरत आन पड़े तब भी किसी सैन्य गुट के नज़रिए को अपनाने की जगह स्वतंत्र रूप से स्थिति पर विचार करना तथा सभी देशों के साथ दोस्ताना रिश्ते कायम करना....

— जवाहरलाल नेहरू

(क) नेहरू सैन्य गुटों से दूरी क्यों बनाना चाहते थे?

(ख) क्या आप मानते हैं कि भारत-सोवियत मैत्री की संधि से गुटनिरपेक्षता के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ? अपने उत्तर के समर्थन में तर्क दीजिए।

(ग) अगर सैन्य-गुट न होते तो क्या गुटनिरपेक्षता की नीति बेमानी होती?